International Journal of Trend in Scientific Research and Development (IJTSRD)
Volume 7 Issue 2, March-April 2023 Available Online: www.ijtsrd.com e-ISSN: 2456 – 6470

अज्ञेय के उपन्यासों का रचनात्मक वैशिष्ट्य

Govind Singh Meena

Associate Professor, Department of Hindi, Babu Shobharam Govt. Arts College, Alwar, Rajasthan, India

'अज्ञेय' के उपन्यास आधुनिक हिन्दी कथा साहित्य की विशिष्ट उपलब्धियाँ हैं। उनका पहला उपन्यास 'शेखर एक जीवनी' (प्रथम खण्ड) 1940 ई. में प्रकाशित हुआ। चार वर्ष बाद 1944 ई. में 'शेखर एक जीवनी' का दूसरा भाग सामने आया। इस प्रथम उपन्यास के प्रकाशन से ही 'अज्ञेय' की औपन्यासिक प्रतिभा को हिन्दी आलोचकों ने स्वीकार कर लिया। शेखर : एक जीवनी' को लेकर जितनी चर्चा (अनुकूल-प्रतिकूल) हिन्दी संसार में हुई, उतनी किसी अन्य उपन्यास को लेकर नहीं हुई। 1951 ई. में 'अज्ञेय' का 'नदी के द्वीप' प्रकाशित हुआ । इसकी चर्चा भी (कटु ही सही) कम नहीं हुई ।

सामान्यत: 'अज्ञेय' का स्वागत एक अतिशय आत्मकेन्द्रित और अहं प्रमुख १३) तथा नास्तिक बुद्धिवादी) कलाकार के रूप में हुआ। ये प्रारम्भिक प्रतिक्रियाएँ उपेक्षणीय नहीं हैं; किन्तु आज 'अज्ञेय' की कला प्रतिष्ठित हो चुकी है। उन्होंने स्वयं अपने और अपनी ख़तियों के सम्बन्ध में काफी कुछ कह डाला है। उनके अनुसार 'शेखर परिस्थितियों में विकसित होते हुए एक व्यक्ति का चित्र' हैं और 'उस चित्र के निमित्त उन परिस्थितियों की आलोचना भी होती गई है।' स्वातन्त्रय की खोज ही शेखर का जीवन दर्शन है। शेखर की सृष्टि करते हुए लेखक (श्री 'अज्ञेय') की दृष्टि एक विद्रोही और आतंकवादी व्यक्तित्व की मनोभूमि की सम्भावना पर केन्द्रित रही है। शेखर अभिजातवर्ग का प्रतीक पुरुष है। वह टूटती हुई नैतिक रूढ़ियों के बीच नीति के मूल स्रोत की खोज करता है। वह समाज की खोखली सिद्ध हो जाने वाली मान्यताओं के बदले व्यक्ति की खढ़तर मान्यताओं की प्रतिष्ठा करना चाहता है। उसे जो सत्य दिखाई देता है, उसे अनदेखा करके वह अपने को प्रवचित नहीं करना चाहता। इसीलिए वह विद्रोही है। वस्तुतः शेखर को जो कुछ दिखाई पड़ा है।

How to cite this paper: Govind Singh Meena "Creative Specialty of Agyeya's Novels" Published in International Journal of Trend in Scientific Research and Development (ijtsrd), ISSN: 2456-6470, Volume-7 | Issue-2, April 2023, pp.1246-1247, URL: www.ijtsrd.com/papers/ijtsrd56280.pdf

IJTSRD56280

Copyright © 2023 by author (s) and International Journal of Trend in Scientific Research and Development Journal. This is an Open Access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution License (CC BY 4.0) (http://creativecommons.org/licenses/by/4.0)

वह आधुनिक मनोवैज्ञानिक एवं बौद्धिक चिन्तन के विकास का परिणाम है। शेखर निस्सन्देह एक आधुनिक रुचिसम्पन्न अभिजात पुरुष है, किन्तु उसके विद्रोही व्यक्तित्व का प्रेरक तत्त्व काम भावना है। वह अपने जीवन में 'सरस्वती' (सगी बहन). 'शशि', 'शारदा', 'शान्ति' आदि कई नारियों के प्रति आकृष्ट होता है और यह आकर्षण काम-मूलक रहा है। 'शशि' को पाकर जैसे वह सब कुछ पा जाता है। उसके स्वातंत्र्य की खोज की अन्तिम परिणति हैं- 'शशि' शशि उसके 'अहं' के प्रति पूर्ण समर्पिता है। इसीलिए उसे पाकर शेखर अपने सारे मनःद्वन्द्वों का सामंजस्य पा लेता है। यहीं शेखर के विद्रोही व्यक्तित्व के प्रति पाठक का चित्त शंकालू हो जाता है। पाठक यह सोचने के लिए विवश होता है कि शेखर को प्रखर बौद्धिकता के प्रकाश में समाज के बहुविध यथार्थ - अंधविश्वास, रूढ़िवादिता, स्वार्थपरता, अज्ञान, वैषम्य, आत्महीनता आदि का जो रूप प्रत्यक्ष हआ है, उसमें यथोचित परिवर्तन के लिए क्या करणीय है? शेखर इसका उत्तर नहीं देता। अपनी सारी कलात्मक उपलब्धियों के बावजूद 'शेखर एक जीवनी' इस स्तर पर मौन है। 'नदी के द्वीप' का कथानायक डॉ. भुवन कॉस्मिक रश्मियों की खोज करने वाला एक वैज्ञानिक है। रेखा एक सम्भ्रान्त और शिक्षित नारी है, जो अपने पति से अलग हो चुकी है। गौरा एक अन्य विदुषी लड़की है, जिसे संगीत में विशेष रुचि है। उसने दक्षिण भारत में जाकर संगीत का अध्ययन किया है।

वह एक अध्यापिका का जीवन व्यतीत करती है। चन्द्रमाधव एक पत्रकार है। वह 'रेखा' और 'गौरा' दोनों से परिचित है और दोनों का प्रणयाकांक्षी है। उसी के यहाँ 'भुवन' का 'रेखा' से परिचय होता है। 'रेखा' और 'गौरा' दोनों ही भुवन की ओर आनष्ट होती हैं। 'रेखा' और 'भुवन' एक-दूसरे के अत्यन्त निकट आ जाते हैं। 'रेखा' माँ बनने की स्थिति में आ जाती है; किन्तु भुवन के गौरव की रक्षा के लिए वह भ्रूण की हत्या कर देती है। इस घटना के बाद भुवन रेखा से दूर हटने लगता है। वह 'गौरा' के निकट आ जाता है। दोनों एक-दूसरे के स्नेह सूत्र में बंध जाते हैं। 'रेखा' दूसरा ब्याह कर लेती है। 'भुवन' और 'रेखा' एक-दूसरे को भूल नहीं पाते। इतने झीने कथा-सूत्र को लेकर कई सौ पृष्ठों का उपन्यास लिखा गया है। कथा प्रेम केन्द्रित मानसिक ग्रन्थियों के सूक्ष्मतम सूत्रों को सुलझाने में विस्तार पा सकी है।

आलोचकों ने लक्षित किया है कि 'नदी के द्वीप' का 'भुवन', 'शेखर' ही है। भुवन की मनःप्रवृत्ति 'शेखर' से बहुत भिन्न नहीं है। अन्तर केवल यह है कि शेखर का व्यक्तित्व क्रमशः विकसित होता हुआ पाठक की कल्पना को प्रभावित करता है और भुवन पूर्णत: विकसित रूप में एकबारगी सामने आता है। शेखर की कहानी प्रेम-मूलक होते हुए भी अन्य अनेक सामाजिक संदर्भों से सम्पृक्त है, जबकि 'नदी के द्वीप' मात्र 'एक दर्द भरी प्रेम कहानी है। स्वयं 'अज्ञेय' के शब्दों में 'नदी के द्वीप' समाज के जीवन का चित्र नहीं है, एक अंग के जीवन का है, पात्र साधारण जन नहीं है, एक वर्ग के व्यक्ति हैं और वह वर्ग भी संख्या की दृष्टि से अप्रधान ही है; लेकिन कसौटी मेरी समझ में यह होनी चाहिए कि क्या वह जिस वर्ग का चित्रण है, उसका सच्चा चित्र है? .....

मेरा विश्वास है कि 'नदी के द्वीप' उस समाज का उसके व्यक्तियों के जीवन का जिसका वह चित्र हैं, सच्चा चित्र है। नदी के द्वीप' व्यक्तियों का जीवन चित्र भी नहीं है, वह मात्र 'चार संवेदनाओं का अध्ययन है। 6) 'रेखा', 'गौरा', 'भुवन' और 'चन्द्रमाधव' ये पात्र प्रेमानुभूति की चार संवेदनाएँ हैं, इसीलिए इनमें क्रियाशीलता से अधिक भावना का गहन उन्मेष ही प्रधान है।

'रेखा' में प्रणयाकांक्षा है, पर दीनता नहीं। वह समर्पण या आत्मदान करना चाहती है, किन्तु ऐसे के प्रति नहीं जो मात्र शारीरिक भूख को ही सब कुछ मानकर चलता है। उसका शारीरिक समर्पण भावना की सूक्ष्म संतुष्टि या पूर्ण मानसिक सामंजस्य का अनुसार परिणाम है। भुवन की

शालीनता गंभीरता, संवेदनशीलता एवं आर्द्रता उस गरिमामयी नारी के समर्पण के आधार बनते हैं, किन्तु ऐसा लगता है कि 'रेखा' का समर्पित व्यक्तित्व भी भुवन से कहीं बहुत ऊँचा है और 'रेखा' को पाकर भुवन का अहं आहत होता है, तुष्ट नहीं। इसीलिए वह गौरा की ओर मुड़ता है। गौरा के समर्पण में प्रेम के साथ भक्ति भी है। अहेतुक भक्ति। उसे पाकर भुवन का अहं परितुष्ट हो जाता है।

चन्द्रमाधव एक क्षुधातुर सामान्य प्रणयाकाक्षी है। उसका लक्ष्य सहज प्रवृत्ति की तृप्ति है। इसलिए वह भुवन की प्रतिद्वन्द्विता में छोटा लगता है। 'नदी के द्वीप' की सबसे बड़ी उपलब्धि आधुनिक नारी के अन्तर्मन की गहनतम प्रवृत्तियों एवं भावनाओं का सूक्ष्म विश्लेषण है। श्री नेमिचन्द्र जैन के शब्दों में- " आधुनिक नारी के व्यक्तित्व के इतने विविध पक्ष इतनी गहराई और सूक्ष्मता के साथ अपने आगे प्रत्यक्ष कर सकना और फिर उसे शब्दबद्ध कर सकना अपने आप में एक बड़ी साहित्यिक उपलब्धि है। " हिन्दी को यह उपलब्धि 'नदी के द्वीप' के माध्यम से हुई। 'अज्ञेय' का तीसरा उपन्यास ' अपने- अपने अजनबी' (1961 ई.) है। इसमें मृत्यु-क्षणों के संदर्भ में मानव मन का विश्लेषण किया गया है। पुस्तक के आवरण पृष्ठ पर अंकित है- "मृत्यु को सामने पाकर कैसे प्रियजन श्री अजनबी हो जाते हैं और अजनबी एक पहचाने हुए, कैसे इस चरम स्थिति में मानव का सच्चा चरित्र उभर कर आता है उसका प्रत्यय, उसका अदम्य साहस और उसका विमल अलौकिक प्रेम भी वैसे ही और उतने ही अप्रत्याशित ढंग से क्रियाशील हो उठते हैं, जैसे उसकी निम्नतर प्रवृत्तियाँ।)

इस प्रकार सामान्यतः आसन्न मृत्यु के चरम आतंक के क्षणों में मानव- - प्रवृत्तियों का विश्लेषण उपन्यास का लक्ष्य कहा जा सकता है। उपन्यास में कुल तीन अध्याय हैं और तीनों में तीन खश्य अंकित है-प्रथम में बर्फ से ढँक हुए एक मकान का दूसरे में बाढ़ की विभीषिका में लगभग अर्धक्षत नदी के पुल पर बसे एक बाजार का और तीसरे में जर्मन सैनिकों से पदाक्रांत एक बाजार का। तीनों में ही मृत्यु का भय व्याप्त है, किन्तु इस भय का चित्रण ही उपन्यासकार का अंतिम लक्ष्य नहीं प्रतीत होता । स्वातंत्र्य की खोज यहाँ भी मूल उद्देश्य प्रतीत होता है। सह-अस्तित्व की बाध्यता मृत्यु की पीड़ा से कहीं अधिक कष्टकर है। 'योके' यह अनुभव करती है कि जिस बाध्यता के कारण वह सेल्मा के साथ है, उसकी पीड़ा मृत्यु के संत्रास से बड़ी है। सार्च के प्रसिद्ध नाटक 'इन कैमरा' (In camera) में भी कुछ लोग एक कमरे में कैद हैं। कमरा नर्क का प्रतीक है।

अन्ततः वे यह अनुभव करते हैं कि उनकी साथ रहने की विवशता ही वास्तविक नर्क है। 'अपने-अपने अजनबी' की सेल्मा 'मृत्यु' कां जीवन का सबसे बड़ा सत्य समझती है, किन्तु 'योके' जीवन को अपने अस्तित्व के बोध को सर्वाधिक महत्त्व देती है। अस्तित्व का बोध स्वतंत्रता की अनुभूति में ही है; इसीलिए वह स्वतंत्रता चाहती है। उसे सारी दुनिया से शिकायत है कि वह उसे चुनने की, वरण करने की स्वतंत्रता नहीं देती। वह मरकर भी अपने इस स्वातंत्र्य बोध को चरितार्थ करती है। वस्तुतः 'अज्ञेय' स्वातंत्र्य को ही चरम मूल्य मानते हैं। मनुष्य मृत्यु से लड़कर भी यदि स्वतंत्रता की उपलब्धि कर सके तो उसके जीवन की सार्थकता मान्य हो सकती है। सामान्यतः यह समझा जाता रहा है कि 'अज्ञेय' पश्चिम के अस्तित्ववाद से प्रभावित हैं और उनके तीसरे उपन्यास- 'अपने-अपने अजनबी' पर यह प्रभाव कुछ ज्यादा ही है।

इस सम्बन्ध में 'अज्ञेय' का यह कथन ध्यान देने योग्य है- "हिन्दी के जो परिश्रम-विरोधी सहजवादी आलोचक मुझको ही अस्तित्ववादी और सार्त्र का अनुयायी कह देते हैं, उनके सम्मुख तो यह निवेदन करना ही निष्प्रयोजन है कि सार्च का साहित्यिक अस्तित्ववाद मेरे लिए विशेष आकर्षक कभी नहीं रहा है, यद्यपि मैंने पढ़ना और समझना उसे भी चाहा जैसे कि अन्य साहित्यिक सिद्धान्तों को समझना चाहता रहा हूँ, लेकिन उन दो प्रवृत्तियों में, जिन्हें 'ईसाई अस्तित्ववाद' और 'वैज्ञानिक अस्तित्ववाद' कहा जाता है, मेरी विशेष रुचि रही, क्योंकि मैं समझता था और अब भी मानता हूँ कि यूरोप की वर्तमान मनःस्थिति और उसके संकट को समझने के लिए इन प्रवृत्तियों का अध्ययन आवश्यक है।) वैसे 'अज्ञेय' का निजी चिन्तन अस्तित्ववाद का अतिक्रमण करता है। वे जीवन और सर्जन को अधिक महत्त्व देते हैं। इस सम्बन्ध में डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी का मत ध्यान देने योग्य है- "यह सही है कि अस्तित्ववाद से 'अज्ञेय' ने कुछ बौद्धिक उत्तेजना पाई हो, पर अपने उत्तरकालीन ख्तित्व में लेखक का यत्न यही रहा है कि भारतीय परिस्थितियों में अस्तित्ववाद से भिन्न और अधिक संगत दृष्टि विकसित की जाए ।'अपने-अपने अजनबी' में सेल्मा की मृत्यु होने पर योके सोचती है- 'ईश्वर भी शायद स्वेच्छाचारी नहीं है उसे भी सृष्टि करनी ही है, क्योंकि उन्माद से बचने के लिए सृजन अनिवार्य है, वह सृष्टि नहीं करेगा तो पागल हो जायगा.... 'उन्माद से बचने के लिए सृजन अनिवार्य है' यह महत्त्वपूर्ण उपपत्ति समूची रचना के केन्द्र में है ।

'अज्ञेय' के उपर्युक्त तीनों ही उपन्यास हिन्दी साहित्य की विशिष्ट खतियाँ हैं। उनका शिल्प तो अनुपम और अन्यतम है। 'अज्ञेय' ने हिन्दी - उपन्यास को अन्तरराष्ट्रीय धरातल पर प्रतिष्ठित किया है। विद्वान् आलोचकों ने 'अज्ञेय' को डी. एच. लारेंस, तुर्गनेव, रोम्याँ रोलाँ, वर्जीनिया वुल्फ, सार्च आदि पाश्चात्य साहित्यकारों से प्रेरित और प्रभावित माना है। स्वयं 'अज्ञेय' ने अपने शेखर को रोम्याँ रोलाँ के 'ज्याँ क्रिस्तोफ' से प्रेरित स्वीकार किया है। प्रेरणा और प्रभाव ग्रहण करना विकासोन्मुख साहित्य का धर्म है। इसके लिए 'अज्ञेय' की आलोचना नहीं की जा सकती। मूल प्रश्न है मनुष्य के प्रति व्यापक सहानुभूति का। यह सहानुभूति कमशः कम होती जा रही है। 'अज्ञेय' ने इसे स्वयं अनुभव किया है। उन्होंने पात्रों को सहानुभूति दी है, वे एक विशिष्ट वर्ग के प्राणी हैं। सम्पूर्ण मानवता को जितनी सहानभूति और प्यार प्रेमचन्द ने दिया था, वह हिन्दी के नये उपन्यासकारों के लिए सम्भव नहीं हो पा रहा है। 'अज्ञेय' भी इसके अपवाद नहीं हैं।

संदर्भ-ग्रंथ-सूची

[1] त्रिशंकु अज्ञेय, मयूर पेपर चैक्स, दिल्ली, 1967 ई. पू. 76

[2] नया साहित्य नये प्रश्न- नंददुलारे वाजपेयी, विद्यामंदिर प्रकाशन, वाराणसी 1955 ई.. पृ. 188

[3] विचार और अनुभूति- डॉ. नगेन्द्र, प्रदीप कार्यालय, मुरादाबाद, 1965 ई.. पृ. 34

[4] आत्मनेपद अज्ञेय, भारतीय ज्ञानपीठ, काशी, 1960ई. पू. 67.

[5] वही, पृ. 73

[6] वही, पृ. 73

[7] अधूरे साक्षात्कार- नेमिचन्द्र जैन, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, 1989ई., पृ. 26

[8] अपने-अपने अजनबी अज्ञेय (आवरण पृष्ठ) मयूर पेपर बैक्स, दिल्ली, 1961 ई.

[9] एक बूँद सहसा उछली- अज्ञेय, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, 1967 ई. पू. 37

[10] हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास- रामस्वरूप चतुर्वेदी, राधाकृष्ण प्रकाशन, वाराणसी 1986 ई. पू. 232

[11] आत्मनेपद अज्ञेय, पू. 64